'फ़रिश्ते निकले' : पुरुष वर्चस्व को चुनौती देती ग्रामीण स्त्री के स्वाभिमान व संघर्ष का दस्तावेज

बीज शब्द : *स्त्री-शोषण, संघर्ष, स्वाभिमान, पुरुष वर्चस्व की चुनौतियाँ*

ISSN 0975 1254 (PRINT)
ISSN 2249-9180 (ONLINE)
www.shodh.net

A Refereed Research Journal
And a complete Periodical dedicated to
Humanities & Social Science Research

शोध संचयन

हिन्दी की सुप्रसिद्ध कथा लेखिका मैत्रेयी पुष्पा ने भारतीय ग्रामीण स्त्री को साहित्य की मुख्यधारा से जोड़कर उसके शोषणयुक्त संघर्षमय जीवन व स्वाभिमान को अपने उपन्यासों में प्रस्तुत किया है। 'फ़रिश्ते निकले' शोषित, संघर्षशील व चेतना संपन्न ग्रामीण स्त्रियों की कहानियों का आख्यान है। स्त्री जीवन की प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष सच्चाईयों को मुखरित करने के लिए उक्त उपन्यास का समाजशास्त्रीय अध्ययन प्रस्तुत करने तथा स्त्री विमर्श के दृष्टिकोण से कृति की समीक्षा करने का प्रयत्न प्रस्तुत शोधा -पत्र में रहा है।

कविता मीणा
व्याख्याता हिन्दी
राजकीय कला कन्या महाविद्यालय, कोटा

हिन्दी की प्रतिष्ठित कथा लेखिका मैत्रेयी पुष्पा ने ग्रामीण स्त्री -जीवन को लेकर अनेक उपन्यासों की रचना की हैं। ग्रामीण स्त्री के संघर्ष व द्वन्द्व को उजागर करती रही लेखिका के उपन्यासों में समय के साथ बदलती ग्रामीण स्त्री की छवि दिखाई देती है। ग्रामीण भारत के पुरुष प्रधाान समाज के धग्रामीण महिला के संघर्ष व साहस के वृत्तान्तों से उन्होंने अपने अनेक उपन्यासों की कथा को गढ़ा है। ग्रामीण स्त्री की व्यथा को लेखिका ने गहराई से जाना-पहचाना तथा अभिव्यक्त किया है। ग्रामीण महिला को लेखिका ने नवीन दृष्टि से देखा है। उनके उपन्यासों में गाँव की वह स्त्री है जिसमें बहुत बदलाव हो चुके हैं। उन्होंने स्त्री के शोषण व उसके ध विद्रोह के अतिरिक्त एक नवीन वैचारिक दृष्टिकोण व दिशा को अपनाया है जो उनको अन्य साहित्यकारों से भिन्न बनाता है। उनके उपन्यासों में पुरुष वर्चस्व की चुनौतियों से ग्रामीण स्त्री की अदम्य जिजीविषा, संकल्प, संघर्ष कमज़ोर नहीं होते हैं। स्वयं के साथ हुए शोषण व अत्याचारों को ग्रामीण महिला नियति मानकर नहीं बैठती है अपितु अपनी नियति वह खुद बनाने का उपक्रम करती है, स्वावलंबी बनने तथा अपने स्वाभिमान के लिए जद्दोजहद करती है। लेखिका का नवीनतम उपन्यास 'फ़रिश्ते निकले' भी एक ग्रामीण महिला के संघर्ष, साहस व स्वाभिमान का आख्यान है।

'फ़रिश्ते निकले' उपन्यास में लेखिका ने 'बेला बहू' के किरदार के माध्यम से भारतीय ग्रामीण समाज में सदियों से कायम स्त्री पर पुरुष वर्चस्व को एक स्त्री के स्वाभिमान व संघर्ष से चुनौती दी है। ग्रामीण परिवेश में रचा गया उक्त उपन्यास ग्रामीण समाज में स्त्री शोषण की अनेक कहानियों को उभारता है। मर्दों के खेल में औरत का नाच इस उपन्यास में परिलक्षित होता है। सामाजिक, शारीरिक, मानसिक शोषण व अत्याचारों के धग्रामीण महिला का संघर्ष एक अविस्मरणीय चरित्र है। बेला की कहानी कहीं नारी की आहत संवेदनाओं को मुखरित करती हैं तो कहीं भावनात्मक, वैचारिक फलक पर पाठक को कचोटती है और स्त्री-आत्मबल को सम्बल भी प्रदान करती है। बेला साधाारण वेश में असाधाारण महिला है। स्वाभिमान व आत्मसम्मान के लिए संघर्ष करने वाली बेला बचपन से लेकर जीवन भर पुरुष सत्ता के अन्याय व अत्याचारों से संघर्ष करते हुए स्वयं को पुरुष की जकड़बन्दी से आज़ाद रखने का प्रयत्न करती है। पुरुष प्रधाान समाज की जकड़बन्दी के धवह लड़ना चाहती है। उसके साहस व हिम्मत की अनेक कहानियों से उपन्यास का ताना-बाना बुना गया है। बेला का संघर्ष खुद पर लादी गयी गुलामी और अन्याय व अत्याचार के खिलाफ रहता है। बारह साल की उम्र में बेला की

एक प्रौढ़ पुरुष शुगर सिंह के साथ सगाई की जाती है। समाज में पुरुष के आश्रित रहने की जड़ भावना को उस पर लादा जाता है। औरत के जीवन में आदमी की सत्ता का गुणगान उस छोटी सी लड़की बेला को पंसद नहीं था। औरत के मान-सम्मान से जुड़े सवाल बेला के बालमन में ही उठने लगे थे। हौंसले, खुद्दारी व आत्मसम्मान से जीवन जीने के लिए स्त्री के जीवन में पुरुष सत्ता को कुबूल करने के संस्कार बेला को समझ नहीं आते थे। बेला के बालमन में उठे सवाल जीवन भर उसके ज़हन में रहते हैं-

'क्या आत्मसम्मान से ज्यादा आराम की खाने का आकर्षण होता है औरत को? खुद्दारी निभाना इतना मुश्किल पड़ता है कि किसी मर्द के पास आते ही वह खुदा लगने लगे?'[1]

छोटी उम्र में विवाह के बंधान में बंधी बेला अपना बचपन खो देती है। पति शुगर सिंह का अपनी देह पर मालिकाना कब्जा उसे पसंद नहीं था। स्त्री की नियति के प्रति असंतोष उसमें स्पष्ट नज़र आता था। समाज के द्वारा औरतों के लिए बनायी गयी नियमावली पर उसे ऐतराज़ रहता है। पत्नी के रूप में अपनी स्थिति को लेकर अनेक सवाल उसके मन में उठते थे। उसके नारी अन्तर्मन का छिपा अवसाद निम्न पंक्तियों में रुपायित होता है-

'भीतर से पुकार उठती। बेला क्यों बिफर रही है? इस आधे-अधूरे आदमी को लेकर क्यों अपना ही अधिकार चाहती है? इस शादी-शुदा जिंदगी से चिपके रहना ही उसका भविष्य है? रोटी, कपडा और मकान की पूर्ति? यह सब यहाँ मुफ्त में तो नहीं मिल रहा।'[2]

बेला के इन सवालों के द्वारा कथा लेखिका ने ग्रामीण स्त्री के उस पारम्परिक स्वरूप को बदलने की कोशिश की है जब वह अपना अस्तित्व पुरुष की परछायी में देखती है। उन्होंने संघर्षशील व चेतना सम्पन्न रूप में ग्रामीण स्त्री को प्रस्तुत किया है। पति शुगर सिंह द्वारा यौन आनन्द व वंशवृद्धि हेतु बेला को अनेक शारीरिक यातनाऐं दी गयी। पति की मर्दानगी गालियों व मारपीट के जरिए उसके शरीर से गुजरती थी। पति की गुप्त बीमारी से बेला को न तों यौवन में वैवाहिक सुख मिल पाता है और न संतान सुख की प्राप्ति होती है।

'वह दिन भर घर के कामों में जुती रहती है और रात को इस नपुंसक के झटके झेलना जरूरी हो जाता है क्योंकि वह हर रात अपनी मरियल मर्दानगी को औरत पर आजमाना नहीं भूलता और रोज पस्त हो जाता है।'[3]

चूँकि पुरुष के प्रति स्त्री का समर्पण शाश्वत माना जाता है लेकिन बेला स्त्री देह पर पुरुष के मालिकाना हक़ की इस बासी सभ्यता को स्वीकार नहीं करती है। पुरुष प्रधाान समाज की सोच जो स्त्री को यौनी मात्र समझते है, बेला उसका विरोधकरती है। मरदाना जकड़बन्दी के खिलाफ वह जीवन जीना चाहती है। पुरुष की छाया में गुलामी का जीवन बिताना उसके स्वाभिमान पर चोट थी जो बेला को स्वीकार नहीं था। पुरुष समाज के शोषण व अत्याचार का शिकार होते जाना भी उसको बर्दाश्त नहीं था। जुल्मों की शिकार बेला अपने पति की बीमारी और खूँखार प्रवृत्ति के कड़ी प्रतिक्रिया करती है। पति शुगर के अन्य स्त्री से विवाह करने की धमकी का वह करारा जवाब देती है।

'तें हिजड़ा, खसिया! दूसरी तीसरी चौथी ले आ। तेरी ही मूछें बारकर जाएँगी। वे गाय भैंस घोड़ी नहीं, औरतें होंगी। मेरी तरह की औरत जैसी औरतें।'[4]

इस स्वाभिमानी स्त्री को पति व समाज के लोगों द्वारा बाँझ ठहराये जाने पर उसका आत्मसम्मान आहत होता है। पति के प्रति नफरत के भाव उसके मन में पैदा होते हैं। आत्मसम्मान व स्वाभिमान भरी जिंदगी पाने की ईच्छा उसमें पनपने लगती है। नारी मन की वह कामना जिसमें उसे एक पुरुष प्रेम के सच्चे स्पन्दन से आह्लादित करता रहे वह बेला के जीवन में पूरी नहीं होती है। शायद यही कारण था कि विवाह के नियमों से विचलित होकर वह घर आये मेहमान (पाहुने) भारत सिंह की हमदर्दी की ओर आकर्षित होती है तथा पति से भी उम्र में बड़े उस हमदर्द पुरुष से बेला प्यार करने लगती है। वह समाज की विवाह संस्था की मान्यताओं से चिपककर नहीं रहती। भारतसिंह के प्रति उसकी आंतरिक भावनाओं की पूर्ण निष्ठा समर्पित होती है। वह अपनी भावनाओं को तृप्त करने की यह नवीन राह ढूँढ लेती है। स्त्री होने का मान-सम्मान, पत्नी का अधिकार तथा बाँझ होने का लांछन मिटाने की चाहत बेला को भारत सिंह की ओर खींचने लगती है। पर-पुरुष से संबंध निर्वाह में वह किसी प्रकार की ग्लानि महसूस नहीं करती है।

'बेला पाहुने से जुड़ती चली जा रही थी कि वे शुगर सिंह के घावों को देखते और बेला की हमदर्दी घिनियाने लगती। वे पति को धीरज बँधाते, बेला आश्वस्त होती। उनकी करुणामयी आँखें घूमतीं, वह कृत-कृत्य हो उठती। यकायक इस नफरत और लांछन भरे आँगन में रंजिश की कीचड़ के बीच बेला की आँखे कमल की पंखुड़ियाँ क्यों होने लगीं?'[5]

बेला की मोहब्बत के उल्लास से भरे जीवन को एक बार फिर यातनाओं ने घेर लिया था। भारतसिंह का प्रेम उससे रति सम्बन्ध बनाने तक सीमित रहता था। भारतसिंह ने उसकी मोहब्बत से छल किया। बच्चा पाने की लालसा तथा प्रेम पाने के लिए बेला ने भारतसिंह को अपनी देह समर्पित की थी उस भारतसिंह ने गर्भवती हुई बेला का धाोखे से गर्भपात कर दिया। वह नारी देह का निर्यात करने वाला व्यापारी था। उसने बेला को अपने व अपने भाईयों के लिए सम्भोग की वस्तु मात्र माना। भारतसिंह व उसके भाईयों ने मिलकर बेला की देह को एक बार फिर से रौंदा था।

बेला की देह को इन पाँचों भाईयों ने पाँच हिस्सों में बाँट दिया था। बेला के प्रेम, विश्वास, मान-सम्मान को भारतसिंह ने चूर-चूर कर दिया था। नारी के विश्वास, मान-सम्मान व अधाकारों का यह हनन दिखाकर लेखिका ने समाज में पुरुष के वर्चस्व तले दब रही स्त्री-अस्मिता के सत्य को उद्‌घाटित किया है।

'दिन रात बीतते, भारत सिंह पास आते। बेला उनके मन-माफिक लुटती। जोरावर आता, बेला की देह पर कीचड़ छिड़क जाता। वह मान रही थी कि मर्दों की इस दुनिया में उसके उजड़ने और लिथड़ने का चलन आज का नहीं, सदियों की वीभत्स कथा है।'[6]

इतना ही नहीं भारतसिंह ने अपने भाईयों के अतिरिक्त अपनी स्वार्थ हेतु नेताओं व मंत्रियों के सम्भोग के लिए भी बेला की देह का सौदा करने की योजना भी बनायी थी । प्रेम में मिले इस छल और विश्वासघात से बेला जीवन से हताश व निराश अवश्य हुई लेकिन संघर्ष करने की हिम्मत उसमें अब भी मौजूद था। बेला का आत्मबल इस दर्द व तकलीफ पर विजयी रहता है। पहले बाँझ और फिर इस बलात्कार की दर्दनाक यातना से भावनात्मक स्तर पर वह टूटती जरूर है परन्तु बेला अपने अस्तित्व को नए सिरे से शुरुआत करने का संकल्प लेती है। सदियों से चले आ रहे पुरुष वर्चस्व को वह अपने मान-सम्मान व स्वाभिमान पर हावी नहीं होने देना चाहती है। बेला अपने साथ हुई साजिशों पर खामोश नहीं रहती। उसके क्रोध का आवेश मर्दों के गुरुर व औरत पर उनके मालिकाना संस्कार को भस्म कर देता है। भारतसिंह व उसके भाईयों की बर्बरता, दरिन्दगी व नाइंसाफी के खिलाफ बेला साहसी कदम उठाकर उन पाँचों व्यभिचारियों को जिंदा जला देती है।

'देखने लायक नज़ारा था, तेल के छिड़काव पर अगिन-बेल बनती हुई पलंगों और दीवारों तक चढ़ने लगी। धरती दावानल की ज्वाला में अदृश्य.....हाहाकार कौन मचाता? नशे की रस्सियों में पाँचों भाई बँधे पड़े थे। जल गए। राख-खाक हो गए। गाँव के बीचोबीच हुआ धुएँ का समायोजन।'[7]

अपने ऊपर हुए अन्याय व अत्याचार का इंसाफ बेला खुद करती है। उसे न पुलिस का डर है और न अदालत की सजा का। अपने इंसाफ के लिए उठाये इस कदम को वह उचित भी ठहराती है। वह अपने वकील बलवीर से भी कहती है-

'असल तो बेकसूर होकर सजा पाना और चुप रहना ही जुर्म है। अपने खिलाफ जुर्म। दरिन्दों को फूँक देना, अन्यायियों को सबक सिखाना और छल करके घिनौने काम करनेवालों को सबक सिखाना, क्या ये कसूर और खताएँ हैं?'[8]

बेला का यह सशक्त एवं चेतना संपन्न स्वरूप भारतीय ग्रामीण स्त्री का एक नया चेहरा उभारता है। कथा लेखिका ने बेला के इस असाधारण विद्रोह को फूलन देवी के जीवन की बेहमेई घटना से संबद्ध कर अभिव्यक्त किया है। अपने साथ जुल्म करने वाले आततायियों के ध बेला का यह असाधारण विद्रोह नारी मनोविज्ञान का नया आयाम प्रस्तुत करता है। उपन्यास में बेला के जीवन की संघर्ष कथा के अतिरिक्त अन्य स्त्री पात्रों की कहानियों में भी अन्याय व अत्याचार के खिलाफ उनके संर्घष व बगावत के स्वरूप को प्रस्तुत किया गया है। नारी मनोविज्ञान का बहुरंगी यथार्थ इस उपन्यास में रुपायित हुआ है।

स्त्री की हैसियत उसकी देह तक सीमित नहीं होती है। समाज के कुछ अमर्यादित प्रश्न उसे विचलित अवश्य करते हैं परन्तु वह मानसिक रूप से इतनी सुदृढ़ व साहसी होती है कि अपने गुलामी से भरे जीवन को मुक्ति के पथ पर आगे बढ़ा सकती है। यह एक स्त्री के मजबूत मनोबल एवं सुदृढ़ स्थिति का परिचायक है। स्त्री की सबलता का ऐसा स्वरूप बेला में भी दिखाई देता है। जेल से रिहा होने के बाद भी बेला नये ढंग से अपने व्यक्तित्व की रचना करती है। इतने शोषण के बावजूद भी वह अपने जीवन के अँधियारे को भेदती हुई नवजीवन की अगवानी कर सकने का साहस अवश्य करती है। वह बीहड़ जंगल के किनारे बसे गाँव में रहकर अजयसिंह, जुझारसिंह जैसे डाकुओं के साथ मिलकर एक टोली (गैंग) तैयार करती है जो गाँव के ग़रीब लोगों व स्त्रियों से जोर जबरदस्ती करने वालों के खिलाफ बगावत करते हैं। दरअसल इस टोली में काम करने वाले ये लोग साधारण जन की मदद करने वाले फ़रिश्ते है। ये लोग इंसानियत से प्रेम करते हैं।

'इस फौज का न कोई एक गाँव है न इलाका और न एक खास जाति और धर्म। सब तरह के लोग थे हमारे दल में और हर आदमी शोषण और गुलामी से नरत करता था, अन्याय और अत्याचार के धलड़ता था।'[9]

बेला, स्त्री के ज़िन्दा रहने व आज़ाद रहने के फर्क को पहचानती है। वह औरत के लिए मान-सम्मान व स्वाभिमान का जीवन चाहती है। वह जिन्दा व आज़ाद रहने के नये ख्याल स्त्री-मन में पैदा करती है। औरत होने की आजादी, खुशी, अधिकारों की प्राप्ति और अस्मिता की रक्षा के लिए साहसपूर्ण कदम उठाने के लिए वह पहल भी करती है।

उपन्यास में बेला के अतिरिक्त उजाला, बसन्ती, लीली जैसे अन्य स्त्री पात्रों के संघर्ष व हिम्मत की कहानियाँ भी औरत के स्वाभिमान से जुड़े भिन्न-भिन्न पहलुओं को प्रस्तुत करती हैं। उपन्यास में कुछ बागी लड़कियाँ हैं तो कुछ प्रेम में धोखा खाई हुई और कुछ समाज की प्रथाओं व परम्पराओं में जकड़ी हुई लड़कियाँ। बेला की टोली में बसन्ती, उजाला जैसी वे लड़कियाँ शामिल है जिन्होंने स्वाभिमान व आत्मसम्मान भरी जिंदगी पाने हेतु

बहुत संघर्ष किया था। कथा लेखिका ने उजाला, लीली, बसन्ती जैसे अन्य स्त्री पात्रों को सती, पतिव्रता तथा देवी के ढ़ांचे से बाहर निकालकर शायद स्त्री की हैसियत में बदलाव लाने की उम्मीद से इन स्त्री पात्रों के चरित्र को गढ़ा है। वीर और उजाला का प्रेम जाति-बिरादरी के दबदबे में रौंदा जाता है। दौलतमंद व ऊँची जाति के लड़के से प्रेम करने की सजा उजाला को उसका बलात्कार कर दी जाती है।

'वीर की मोहब्बत, उजाला का सौभाग्य या दुर्भाग्य?'[10]

अपने साथ हुई इस खौफनाक घटना से लौहपीटाओं की यह लड़की फिर भी हिम्मत नहीं हारती। उन दौलतमंद बिरादरी के मनचले लड़को की धमकी से दोबारा वह घबराती नहीं है।

'लौहमानवों की बेटी ने बेधड़क वार किया। अभी तक जो सबसे ज्यादा उत्तेजक मर्दानगी का मालिक बन रहा था, उसके गले से चीख की जगह दर्द फट पड़ा। वह घुटनों के बल गिरा।'[11]

उजाला के साथ हुई वह भयावह स्थिति पाठक के मन को झकझोर कर रख देती है। एक औरत के मान-सम्मान के साथ ऐसा खिलवाड़ पाठक-मन में औरत के स्वाभिमान से जुड़े अनेक सवाल पैदा करता हैं। पुरुष का ऐसा पशुबल यदि बल है तो निसंदेह स्त्री पुरुष से कमजोर है लेकिन क्या एक स्त्री का साहस पुरुष की ताकत को पीछे नहीं छोड़ देता है? उजाला को प्रेम करने की ऐसी सजा देना पुरुष प्रधान समाज व पुरुष की विकृत मानसिकता को दर्शाता है। प्रेम तो वीर ने भी उजाला से किया था फिर उजाला के सम्मान के साथ ही ऐसा खिलवाड़ क्यों? उजाला की कहानी लौहपीटाओं के विस्थापन की समस्याओं को भी उद्घाटित करती है। उजाला कहती है-

'बापू इतनी बड़ी दुनिया में हमारे हिस्से की कोई धरती नहीं है? धरती का छोटा सा टुकड़ा भी नहीं?'[12]

लीली भी एक ऐसी ही बहादुर लड़की है जो अपने मान-सम्मान व स्वाभिमान के लिए तथा गाँव वालों की सुरक्षा व न्याय के लिए बागी बनती है तथा डकैतों के उस गिरोह में शामिल होती जो अन्यायपूर्ण स्थितियों के धलड़ते हैं। वह कहती है-

'मैंने उस घर से बगावत की है, जिसमें मुझे बिना मेरी मर्जी के किसी के संग ब्याह और बाँध दिया जाता है। उस बाप से बगावत की जो डाकुओं को शरण देकर मनमाने लाभ उठाता और मुझे उनके सामने आने-जाने के उपाय रचता।'[13]

बसन्ती एक ऐसा चरित्र है जो घर के बदतर हालातों से मजबूर होकर डाकुओं के गिरोह में भोजन पहुँचाने का कार्य करती है। विकास और उन्नति के दावे करने वाले सरकारी अफसरों द्वारा ही बसन्ती के परिवार को सताया गया था। कर्ज और नीलामी की मार को सहता उसका परिवार भूख और कंगाली से गुजरता है।

'जुझार और बसन्ती जैसे युवा और उनके परिवार डाकुओं के सताए हुए या साहूकारों के लतियाए हुए नहीं हैं, वे सरकारी डकैतों ने लूटे हैं।'[14]

यही कारण था कि बसन्ती डकैत अजय सिंह और उसके गिरोह की मदद करती है जो अमीरो को लूटकर गरीबो की सहायता करते है, ताकतवरों से कमजोर इंसानों को बचाते हैं और औरतों के मान, स्वाभिमान की परवाह करते हैं। समाज की नज़रों में लूटमार करने वाले ये लोग बसन्ती के जीवन में फरिश्तें बनकर आते हैं। डकैतों के बीच रहकर यह लड़की अपनी मजबूरी का मजबुती से सामना करती हुई उपन्यास के अन्तर्गत औरत के स्वाभिमान का एक नया उदाहरण प्रस्तुत करती है।

मैत्रेयी पुष्पा ने अपनी स्त्री-संवेदना को इन स्त्री पात्रों की सोच, चिन्तन व विचार व दृष्टिकोण के माध्यम से प्रस्तुत किया हैं। उपन्यास में बेला का सम्पूर्ण जीवन स्त्री के मान-सम्मान व अधिकारों के संरक्षण में व्यतीत होता है। जिन संघर्षों से आमतौर पर स्त्री टूटने लगती है वहाँ ये स्त्री पात्र साहस के साथ संघर्षशील बने रहते है। अपने स्वाभिमान व इंसानियत से ये स्त्रियाँ सबसे अधिक प्रेम करती है। उपन्यास के अंत में बेला और उसकी टोली की महिला सदस्य अपनी मुक्ति के रास्ते तलाश करती है तथा स्कूल खोलकर अन्याय व अत्याचार के धलोगों को संघर्ष व स्वाभिमान का पाठ पढ़ाती है। उपन्यास में एक विरोधमयी स्थिति दिखाई देती है कि जो लोग डकैत व लुटेरे थे वे स्त्री के मान-सम्मान के रक्षक व फ़रिश्ते बनकर सामने आते है और समाज में जिन्हें औरत के मान-सम्मान का रखवाला माना जाता है वे स्त्री के स्वाभिमान के लुटते नज़र आते हैं।

कथा लेखिका मैत्रेयी पुष्पा ने इन साधारण ग्रामीण औरतों की जटिल कहानी को सहज विविधता से प्रस्तुत किया है। लेखिका के अन्य उपन्यासों की भाँति ही यह उपन्यास समाज में स्त्री होने का वजूद तलाशता है। वर्तमान स्त्री की सामाजिक हैसियत का प्रतिबिम्ब उपन्यास में देखा जा सकता है। स्त्री-शोषण के विविध स्वरूपों के साथ लेखिका ने समाज की समस्त विषमताओं के बीच एक ग्रामीण स्त्री को नई चेतना की प्रकाश रेखाएँ अवश्य प्रदान की है। समाज में मर्दानगी का विकृत चेहरा, स्त्री-पुरुष का अंतर व स्त्री अस्मिता के संघर्ष का बौद्धिक अन्वेषण कर लेखिका ने ग्रामीण भारतीय स्त्रियों की उपेक्षित वास्तविकताओं के स्वरूप के साथ ग्रामीण महिलाओं में बदलाव की उम्मीद को प्रस्तुत किया है। स्त्री शोषण के विविध आयामों को प्रस्तुत करता यह उपन्यास ग्रामीण स्त्री के स्वाभिमान व संघर्ष को नयी दिशा देता है। एक ग्रामीण स्त्री के जीवन को विकसित होने का सुअवसर प्रदान कर लेखिका ने वैश्वीकरण के वातावरण में नारी शक्ति को प्रस्फुटित करने का कार्य किया है जो आज के समय की माँग है। नारी ज्ञान व शक्ति को भिन्न- भिन्न

दृष्टिकोण से उपन्यास में प्रस्तुत किया गया है। उक्त उपन्यास में लेखिका का स्त्रीवादी विमर्श पूर्ण सक्षमता से प्रस्तुत हुआ है। कथा लेखिका का यह प्रयास महिला सशक्तिकरण की मुहिम को ताकत देता है। शायद इससे बड़ी राष्ट्रसेवा एक साहित्यकार के द्वारा नहीं हो सकती।

संदर्भ-

1. 'फ़रिश्ते निकले'- मैत्रेयी पुष्पा-राजकमल प्रकाशन,नयी दिल्ली-प्रथम संस्करण, 2014-पृ.सं. 20
2. वही , पृ.सं. 35
3. वही, पृ.सं. 35
4. वही, पृ.सं. 34
5. वही, पृ.सं. 45
6. वही, पृ.सं. 79
7. वही, पृ.सं. 83
8. वही, पृ.स 90
9. वही, पृ.सं.100
10. वही , पृ.सं.193
11. वही , पृ.सं. 177
12. वही , पृ.सं.153
13. वही , पृ.सं.124
14. वही , पृ.सं. 113

(Continued from Page No. 49)

Thus we can conclude that ancient Indian wisdom is just like a sun in the sky which is shinning from eras and universal truth because it is the only source of light which is showing path of development to modern medical science.

REFERENCES:

1. Radhakrishnan, S.(1948). "The Bhagwadgita"(ed. and tr.) George Allen & Unwin Ltd., London
2. Radhakrishnan, S. (1953). "The Principal Upanishads", George Allen & Unwin Ltd., London
3. Stratham A. & Cadell T.(1978). "Philosophical and Political History of the Settlements in East Indies", London ,Vol.1
4. Rajput, J.S. (2001). "Encyclopaedia of Indian Education", Pub. By NCERT, New Delhi,Vol. II
5. Dash, B. N.(2003). "History of Education" Published by Dominant publishers and ditributers, New Delhi, vol. 1
6. Aggrawal J. C.(2008).Development of Education System in India,Pub. by Shipra publication New Delhi, vol.4
7. Garg L.(Tr.) (2011). "Ayurveda:Vibhinna Pahlu",Pub. by National Book Trust India,New Delhi,Vol.6
8. Bhatnagar A. B.& Bhatnagar S.(2014). "Indian Education System:History Development and Contemporary Problems" Pub. by R. Lall Book Depot, Meerut, vol.1
9. www. Delnet.ins

(Continued from Page No. 63)

88. Woolacott, J.E., India on Trial, p.153.
89. Tarachand,History of freedom Movement in India, Vol. IV, pp.71.
90. Bakshi, S.R.,Simon Commission and Indian Nationalism, p.68.
91. Fischer, Louis, The Life of Mahatma Gandhi, p.280.
92. The Tribune, November 12, 1927.
93. The Committee which was appointed on May 19,1928 submitted its report on August 10,1928. Its members were Pt.Motilal Nehru(Chairman),Ali Imam,Tej Bahadur Sapru,M.S.Aney,Mangal Singh,Shauaib iQureshi,Subhash Chandra Bose and G.R.Pradhan.
94. see All-Parties, Conference, 1928, Report of Committee, Allahabad, 1928, p.100.
95. TOI, Oct.12, 1928.
96. Bombay Chronicle, Oct. 13, 1928.
97. The Tribune, Oct.31, 1928.
98. The Tribune, Nov.19 and 20, 1928, Gandhi also stated that with Lalaji's death, a great planet has set in India's solar system.
99. The Tribune, Dec.4, 1928.
100. Nehru, Jawaharlal, An Autobiography, pp.161-165.
101. Nehru, J.L., An Autobiography, p.171.
102. Times of India, November 15, 1927.
103. Tarachand,History of freedom Movement in India, Vol. IV, p.71.
104. Gopal, S.,Viceroyalty of Lord Irwin (1926-31), p.21.
105. Ibid.
106. Ibid.
107. Irwin Papers, Irwin to Berkinhead, May 26, 1927.
108. Halifax, Fullness of days, pp.114-116.
109. Birkenhead, The Earl of, The Life of Lord Hallifax, p.242.
110. Mesbahuddin,The British Labour Party and Indian Independence Movement (1917-1939), p.84.